जैन
पथप्रदर्शक
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

'मैं कौन हूँ ?' का सही उत्तर पाने के लिए 'मैं आत्मा हूँ ' की अनुभूति प्रबल हो, यह अति आवश्यक है।

ह्न मैं कौन हूँ, पृष्ठ : 7

वर्ष : 28, अंक : 5 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
जून (प्रथम)2005 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पं. संजीवकुमार गोधा व पं. जितेन्द्र वि. राठी | वार्षिक शुल्क : 25 रु., एक प्रति : 2/-

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के निर्देशन में ...

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव सानन्द सम्पन्न

मुम्बई (भायन्दर) : यहाँ नवनिर्मित श्री महावीर स्वामी दिगम्बर जिनमन्दिर की प्रतिष्ठा हेतु दिनांक 7 मई से 13 मई, 2005 तक श्री 1008 नेमिनाथ दिग. जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन मुमुक्षु समाज ट्रस्ट, भायंदर (वेस्ट) के तत्त्वावधान में विविध धार्मिक आयोजनों के साथ सानन्द सम्पन्न हुआ।

कार्यक्रम का शुभारंभ प्रतिदिन प्रात: पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सी.डी. प्रवचनों से होता था। इसी क्रम में अन्तर्राष्ट्रीय प्रवक्ता डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल, जयपुर के पंचकल्याणक के विविध विषयों पर मार्मिक प्रवचन हुए। साथ ही प्रतिदिन प्रात: एवं दोपहर में पण्डित शैलेषभाई शाह, तलोद एवं रात्रि में पण्डित उत्तमचन्दजी जैन, सिवनी के भी आध्यात्मिक प्रवचन हुए।

इनके अतिरिक्त पं. प्रदीपजी झांझरी उज्जैन, पं. अभयजी शास्त्री देवलाली, पं. राजेन्द्रजी जबलपुर, पं. अभिनन्दनजी शास्त्री खनियांधाना, पं. हेमचन्दजी 'हेम' देवलाली, पं. प्रकाशदादा मैनपुरी, पं. मिठालालजी दोशी हिम्मतनगर, पं. रजनीभाई दोशी हिम्मतनगर, पं. चन्दुभाईजी मेहता फतेपुर, पं. बाबूभाई मेहता फतेपुर, पं. मणीभाई मुनई, पं. पंकजभाई भायन्दर, पं. रत्नेशजी मेहता हिम्मतनगर आदि विद्वानों के भी प्रतिदिन 11 प्रवचन एवं कक्षाओं के माध्यम से धर्मलाभ प्राप्त हुआ।

महा महोत्सव की सम्पूर्ण प्रतिष्ठा-विधि बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री, सनावद के निर्देशन एवं प्रतिष्ठाचार्यत्व में सह-प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. धन्यकुमारजी बेलोकर गजपंथा, पं. शांतिकुमारजी पाटील जयपुर, पं. मधुकरजी जलगाँव, पं. ऋषभजी शास्त्री छिन्दवाड़ा, पं. राजकुमारजी शास्त्री बांसवाड़ा, पं. मनीषजी शास्त्री पिड़ावा, पं. सुबोधजी शास्त्री शाहगढ़, पं. विरागजी जबलपुर, पं. सुदीपजी भोपाल, पं. बाबूलालजी बांझल गुना, पं. सुकुमालजी झांझरी उज्जैन आदि विद्वानों द्वारा शुद्ध आम्नायपूर्वक सम्पन्न कराई गयी।

इस अवसर पर मूलनायक 1008 श्री महावीर भगवान तथा विधिनायक श्री नेमिनाथ भगवान के अतिरिक्त श्री चन्द्रप्रभ भगवान, श्री शांतिनाथ भगवान, श्री कुंथुनाथ भगवान, श्री अरनाथ भगवान की मनोज्ञ भाववाही प्रतिमायें विराजमान की गयी।

दिनांक 10 मई को आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी की 116 वीं जन्मजयंती के अवसर पर प्रात: विशाल जुलूस निकाला गया; तत्पश्चात् जिनालय पर 116 स्वर्णकलशों की स्थापना की गई। रात्रि में गुरुदेवश्री के जीवनचरित्र पर आधारित विद्वतसंगोष्ठी का भी आयोजन किया गया।

महोत्सव में नेमिकुमार के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती ललीताबेन एवं श्री चंपकलाल गांधी (तलोद) भायंदर ने प्राप्त किया तथा राजमती राजुल के माता-पिता बनने का सौभाग्य श्रीमती ऊषाबेन एवं श्री राकेशकुमार शाह (तलोद) भायंदर ने प्राप्त किया।

सौधर्म इन्द्र व शची इन्द्राणी बनने का सौभाग्य श्री सुनीलकुमार जयंतीलाल शाह एवं श्रीमती रीटाबेन सुनीलजी शाह (सदानामुवाडा) भायंदर तथा सम्पूर्ण महायज्ञ के यज्ञनायक श्री रमेशभाई मणीलाल कोटड़िया ओरान (मुम्बई) ने प्राप्त किया।

महामहोत्सव के दौरान श्री वीतराग-विज्ञान पाठशाला, भायन्दर द्वारा सम्पन्न कराये गये सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अन्तर्गत 7 मई को मंचित नाटक **पंचकल्याणक से निज कल्याण की ओर** तथा 10 मई को गुरुदेवश्री के जीवन पर आधारित नाटक **एक नयी सुबह** विशेष रहे।

महोत्सव में भारतवर्ष के कोने-कोने से लगभग 5 हजार साधर्मी बन्धुओं ने भाग लिया। इस अवसर पर लगभग 40 हजार रुपयों का सत्साहित्य एवं प्रवचनों के ऑडियो व सी.डी. कैसिट्स घर-घर पहुँचे। **ह्न वरूण शाह**

महाविद्यालय का गौरव

श्री टोडरमल दि. जैन सि. महाविद्यालय में अध्ययनरत छात्र **नितिन कुमार जैन** सुपुत्र श्री चन्द्रप्रकाशजी जैन, सेमारी (उदयपुर-राज.) ने माध्यमिक शिक्षा बोर्ड अजमेर (राज.) द्वारा संचालित उपाध्याय वरिष्ठ (12 वीं) की परीक्षा में 83 प्रतिशत अंक प्राप्त कर सम्पूर्ण राजस्थान में वरीयता सूची में **प्रथम स्थान** प्राप्त किया। कक्षा का परिणाम भी शत-प्रतिशत रहा।

साथ ही उपाध्याय कनिष्ठ (11 वीं) की परीक्षा में सुश्री **स्वाती जैन** सुपुत्री श्री रमेशचन्द जैन, जयपुर ने भी 83 प्रतिशत अंक प्राप्त कर कक्षा में **प्रथम स्थान** तथा **गजेन्द्र जैन** सुपुत्र श्री अमृतलाल जैन, उदयपुर ने 81 प्रतिशत अंक प्राप्त कर कक्षा में **द्वितीयस्थान** प्राप्त किया।

उक्त छात्रों को जैनपथप्रदर्शक समिति एवं महाविद्यालय परिवार की ओर से हार्दिक बधाई !

ह्न प्रबन्ध सम्पादक

सम्पादकीय –

नींव का पत्थर

3 ह्न रतनचन्द भारिल्ल

वही ढाक के तीन पात

प्रखर प्रतिभा के धनी विराग ने जब माँ के सामने धनार्जन में महारत हासिल करने के लिए विशेष अध्ययन हेतु परदेश जाने की इच्छा व्यक्त की तो उसकी माँ ने उसे परदेश जाने से साफ मना कर दिया; क्योंकि वह जानती थी कि इस भोग प्रधान भौतिक युग में यदि पैसा जरूरत से ज्यादा हो जाय तो सन्मार्ग से भटक जाने की संभावनायें बढ़ सकती है। वह स्वयं भी इसकी भुक्तभोगी थी; फिर परदेश की तो बात ही निराली है। वहाँ का तो सम्पूर्ण वातावरण ही भोगप्रधान है; अतः वहाँ जाने की अनुमति देना तो संतान को कुएँ में धकेलने से भी अधिक बुरा है।

वस्तुतः विराग को अपने जन्म के पूर्व पिता के साथ घटी अघट-घटनाओं की जानकारी नहीं थी और उसकी माँ उसे पिता का पूर्व इतिहास बताना भी नहीं चाहती थी; अत: वह अपने बेटे को विदेश के वातावरण में जाने की अनुमति कैसे दे सकती थी ? अतः पहले तो उसने स्पष्ट मना ही कर दिया; परन्तु जब माँ ने उसकी परदेश जाने की तीव्र इच्छा, अति उत्साह और विशेष आग्रह देखा तो उसने **वस्तु स्वातंत्र्य के सिद्धान्त को स्मरण करते हुए और विराग की होनहार का विचार कर उसे अध्ययन हेतु परदेश जाने की अनुमति दे दी;** किन्तु अपने सदाचार को सुरक्षित रखने के लिए एक बार पुनः सचेत कर दिया।

लोक में बालहठ, स्त्रीहठ और हमीरहठ ह्न ये हठ प्रसिद्ध है; किन्तु समतारानी उन स्त्रीयों में नहीं थी। वह विवेकशील थी, समय पर मुड़ना भी अच्छी तरह जानती थी। अतः उसने विराग को परदेश जाने से नहीं रोका।

माँ समता को विराग के अबतक के आचरण को देखकर भी उसके चरित्र पर पूर्ण विश्वास था तथा उसने विराग को पालने में झुलाते समय भी लोरियाँ गा-गा कर धर्मामृतपान कराया था। अतः वह विराग के प्रति पूर्ण आश्वस्त थी कि वह भोगों में नहीं भटकेगा।

बहुआयामी व्यक्तित्व का धनी विराग अपनी माँ समता रानी से सदाचार की प्रेरणा पाकर परदेश में भी दुर्व्यसनों से सदा दूर तो रहा ही; नित्य देवदर्शन, रात्रि भोजन त्याग, पानी छानकर पीने, अभक्ष्य-भक्षण नहीं करने तथा लोक विरुद्ध कार्य न करने जैसे नैतिक नियमों का निर्वाह भी बराबर करता रहा।

वह दान-पुण्य परोपकार करने में भी कभी पीछे नहीं रहा; परन्तु आध्यात्मिक प्रवचन सुनने का सौभाग्य उसे अधिक नहीं मिलता; क्योंकि पहले तो वह पढ़ाई करने के लिए परदेश में रहा, फिर उच्च शिक्षा के अनुकूल उत्तम आजीविका के लिए उसे परदेश में ही स्थाई रूप से रहना अनिवार्य हो गया। वहाँ पर भी वह माँ की वचनबद्धता को ध्यान में रखते हुए सदाचार और नैतिक नियमों का बराबर निर्वाह करता रहा; परन्तु मूल में भूल यह कर बैठा कि उस धर्माचरण रूप सदाचार को ही वह धर्म मानकर संतुष्ट हो गया। जबकि धर्म का स्वरूप धर्माचरण से कुछ अलग ही है।

भौतिकदृष्टि से भले ही परदेश लोगों को सुखद लगता हो, पर आध्यात्मिक उन्नति के लिए वहाँ की स्थिति बिल्कुल भी अनुकूल नहीं है, वीतरागी साधु-सन्तों का आवागमन तो भौतिकवादी भोगप्रधान दूरस्थ देशों में संभव ही नहीं है, युवापीढ़ी के विद्वान भी वहाँ की चकाचौंध में चौंधियाकर वहीं के होकर रह जाते हैं और अपनी अर्जित विद्वता से हाथ धो बैठते हैं। वहाँ धन संचित करने की धुन में वे धर्म-ध्यान से वंचित हो जाते हैं। यदि हम बुजुर्ग विद्वानों की बात करें तो अधिकांश शारीरिक दृष्टि से इतने दुर्बल हो जाते हैं कि चाहकर भी अपनी सेवायें नहीं दे पाते। जो देते भी हैं उनके वे उपदेश **ऊंट के मुँह में जीरे** की कहावत को ही चरितार्थ करते हैं। क्या होता है एक वर्ष में ४-५ प्रवचनों से। अतः उत्तम तो यही है कि जहाँ तत्त्वज्ञान का भरपूर लाभ मिले वहाँ ही स्थाई आवास और आजीविका के साधन जुटाना चाहिए।

माँ ने विराग को फोन पर भी बहुत समझाया कि ''बेटा ! यदि तुझे यह दुर्लभ मनुष्य जन्म सार्थक करना हो तो तू स्वदेश वापिस आ जा; परन्तु जब तक स्वयं की होनहार भली नहीं होती तब तक माँ की बात तो क्या, भगवान की बात भी समझ में नहीं आती और संसार की उलझनों में अटके रहने के लिए कोई न कोई बहाना तो अवश्य मिल ही जाता है। विराग को भी वहाँ रहने को अपना कैरियर बनाने का बहाना पर्याप्त था।

विराग की पत्नी चेतना भी कंप्यूटर इंजीनियर होने से उसे भी वहाँ अच्छी सर्विस मिल गई, इस कारण वह भी स्वदेश नहीं लौटना चाहती थी, तथापि स्वदेश लौटने के विचार को प्रबल कारण यह बन रहा था कि परदेश में ही जन्मी एवं भारतीय भाषा और संस्कृति से सर्वथा अपरिचित उसकी इकलौती बेटी अनुपमा अब विवाह योग्य हो चली थी। पाश्चात्य-संस्कृति में पली-पुसी होने और उसी वातावरण में निरन्तर रहने से कॉलेज में साथ-साथ पढ़ने वाले कुछ ऐसे लड़कों से उसकी मित्रता हो गई जो कभी भी उसके चरित्र को कलंकित कर सकते थे। उनका मिलना-जुलना और घर आना-जाना रोकना भी संभव नहीं था। अतः एक दिन विराग और चेतना को यह निर्णय लेने के लिए बाध्य होना पड़ा कि ''अब तो परदेश प्रवास छोड़ना ही होगा, अन्यथा हम अपनी-लाड़ली बेटी से ही हाथ धो बैठेंगे।''

आत्म कल्याण करने एवं परलोक सुधारने के लिए भले ही कोई तत्काल ऐसे निर्णय न ले पाये; पर संतान का मोह कुछ ऐसा ही होता है कि उनके लिए जो भी करना पड़े, लोग करते हैं।

फिर क्या था ह्न दो-चार घंटे विचार-विमर्श करके उन दोनों ने आनन-फानन में स्वदेश लौटने का निर्णय कर लिया और छह माह के अन्दर वापिस स्वदेश भी आ गये। जब तक विराग परदेश में रहा तब तक वहाँ माँ और गुरुजनों की भावनाओं का ध्यान रखते हुए धर्माचरण तो करता रहा, परन्तु उसे अभी उस धर्माचरण के प्रयोजन का कुछ पता ही नहीं था। यदि उससे कोई पूछे कि तुम यह सब क्यों करते हो ? धर्माचरण पालने से तुम्हें क्या लाभ मिला है ? और उसका वास्तविक फल क्या है ? तो उनके क्या-क्यों-किसलिए आदि प्रश्नों का उसके पास कोई संतोषजनक समाधान

नहीं था। बस, माँ और गुरुजनों ने जैसा/जो करने को कहा; आँख मीचकर उनके निर्देशों का पालन करता आ रहा था।

वह सोचता की अभी तक मुझे वह धर्म हाथ नहीं लगा, जिसके फल में कषायें कृश होती हैं, विषय वासनायें क्षीण होतीं हैं, राग-द्वेष की आग बुझती है, परपदार्थों में इष्टानिष्ट कल्पनायें नहीं होतीं। मैंने सुना था कि धर्म के फल में यह सब होता है, पर मेरे में अब तक ऐसा कुछ नहीं हुआ।

मुझे अभी भी बात-बात में क्रोध आता है, छोटी-छोटी बातों से मुझे मान-अपमान की फीलिंग होती है, यश-प्रतिष्ठा का लोभी भी मैं कम नहीं हूँ, इस हेतु जो भी दाव-पेंच करना पड़ते हैं, करने में पीछे नहीं रहता।

मैंने यह भी सुना है कि धर्मरूपी वृक्ष से निराकुल सुख और आत्मशान्ति के ऐसे मधुर फल प्राप्त होते हैं जिन्हें पाकर जीव अनन्त काल तक के लिए अनन्त सुखी हो जाता है। पर मुझे वे सुख-शान्ति के फल आज तक प्राप्त नहीं हुए है; जबकि मैं धर्म के लिए पूर्ण समर्पित हूँ। मेरी यही एक ज्वलन्त समस्या है; एतदर्थ मुझे और क्या करना होगा ? यह प्रश्न मेरे सामने ज्यों का त्यों खड़ा है।

मेरे साथ तो अब तक वही ''**ढाक के तीन पात**'' वाली कहावत चरितार्थ हो रही है। जिसतरह दिन-रात पानी बरसने पर भी ढाक की एक टहनी में तीन पत्ते ही निकलते हैं, उसी तरह इतना सब कुछ करते हुए भी मेरे पल्ले भी निराकुल सुख-शान्ति के नाम पर विशेष कुछ भी नहीं आया है। वैसे ही मोह-माया, वैसी ही कषायें, वही विषय वासना, कोई भी फर्क नहीं पड़ रहा है। आखिर ऐसा क्यों होता है ?

मैं तो छोटे-छोटे प्रतिकूल प्रसंगों में आज भी आग-बबूला हो जाता हूँ। बदले की भावना इतनी प्रबलरूप ले लेती है कि मरने-मारने को भी तैयार हो जाता हूँ। मुझे उस स्थिति में देखकर लोग कहते हैं कि इन धर्मात्माओं से तो हम अधर्मात्मा ही अच्छे हैं, भले धर्म का ढोंग नहीं करते; पर क्रोधावेश में ऐसे बे-काबू भी नहीं होते। वे कहते हैं ह्न ये कैसे क्षमाधर्म के धारक हैं इन पर तो '**मुँह में राम बगल में छुरी**' वाली कहावत चरितार्थ होती है। 'उत्तम क्षमा-क्षमा' कहते रहते हैं और क्रोध करते रहते हैं।

मैंने तो एक बार यह भी सुना था कि ''धर्म साधना से पाप के बीजरूप परिग्रह आदि वैभव के सुखद संयोगों की ममता टूटकर समता भाव जागृत हो जाता है। आत्मध्यान और तत्त्व चिन्तन में चित्त एकाग्र होता है। राग-द्वेष रहित होकर वीतरागता की ओर अग्रसर होते हैं; परन्तु मेरे जीवन में ऐसा कुछ भी तो नहीं हुआ। इसकारण आज भी वह प्रश्न ज्यों का त्यों निरुत्तरित है।

कैसा होगा धर्म का स्वरूप ? जिससे जन्म-जरा, भूख, प्यास, रोग, शोक, मद, मोह आदि दोषों का अभाव होकर वीतराग भाव जागृत होता है ? आत्मा-परमात्मा बन जाता है। आत्मा अतीन्द्रिय, निराकुल सुख-सरोवर में निमग्न होकर सदैव परम शान्ति और शीतलता का अनुभव करता है। धर्माचार्य तो यह कहते हैं कि ह्न धर्म से तो समता भाव के साथ त्रैकालिक स्थाई आनन्द का झरना झरता रहता है, इसलिये अब मैं माँ के सान्निध्य में रहकर उस धर्म को समझने का प्रयास करूँगा।'' ●

विदेशों में भी जैनदर्शन के अध्ययन की जिज्ञासा

नई दिल्ली : जैनदर्शन के सर्वांगीण गहन अध्ययन हेतु अमेरिका विश्वविद्यालयों के 9 आचार्य एवं शोधछात्रों का एक दल दिनांक 31 मई, 2005 को भारत आ रहा है। जो पूरे दो माह तक भारत के विभिन्न जैन संस्थानों का भ्रमण कर जैनधर्म के विभिन्न पहलुओं का सूक्ष्म अध्ययन करेगा। इन शोधार्थियों का एक कैम्प 15 से 29 जून, 2005 तक जयपुर स्थित भट्टारकजी की नसियाँ में भी आयोजित होगा।

विशेष उल्लेखनीय है कि इस कार्यक्रम को उनके विश्वविद्यालय मान्यता दे रहे है तथा उनके द्वारा प्रतिवर्ष इसप्रकार का कार्यक्रम आयोजित करने का निर्णय भी लिया गया है; जिससे विदेशी विद्यालयों में भी जैनदर्शन की उच्चशिक्षा एवं शोधकार्य को बढ़ावा मिलेगा।

कार्यक्रम का उद्घाटन दिनांक 5 जून, 2005 को इंडिया इंटरनेशनल सेन्टर, नई दिल्ली में रखा गया है।

विशेष जानकारी हेतु कार्यक्रम के निदेशक **श्री शुगनचन्द जैन**, डी-28 पंचशील, नई दिल्ली, फोन - 98181-39000 से सम्पर्क किया जा सकता है।

एम. फिल, जैनधर्म दर्शन एवं संस्कृति सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम 2005-06

जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर द्वारा संचालित एम.फिल, जैनधर्म दर्शन एवं संस्कृति सर्टिफिकेट पाठ्यक्रम प्रारंभ किये जा रहे हैं। यह सत्र 1 जुलाई, 2005 से प्रारम्भ होगा। इसमें प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी, समाजशास्त्र, इतिहास, राजनीतिशास्त्र, दर्शन शास्त्र, मनोविज्ञान शास्त्र के प्राध्यापक, शोधार्थी व स्नातकोत्तर छात्र-विद्वान सम्मिलित हो सकेंगे।

नियमावली व आवेदन पत्र दिनांक 15 जून, 2005 से जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से प्राप्त कर सकते हैं। आवेदन पत्र पहुँचने की अन्तिम तिथि 15 जुलाई, 2005 हैं। **ह्न पी.सी. जैन,** निदेशक
जैन अनुशीलन केन्द्र, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

चुनाव सम्पन्न

गुना (म.प्र.) : यहाँ दिनांक 29 मार्च को श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल के चुनाव निर्विविरोधरूप से सम्पन्न हुए; जिसमें **अध्यक्ष** श्री मांगीलाल जैन, **उपाध्यक्ष** श्री सूरजमल पाटनी एवं श्री राजकुमार बांझल, **मंत्री** श्री चिमनलाल जैन, **सहमंत्री** श्री वीरेन्द्र जैन, **कोषाध्यक्ष** अशोककुमार जैन तथा **अकेक्षंक** अशोककुमार बांझल को चुना गया। **ह्न मांगीलाल जैन**

दानराशि

1. श्री केशवलालजी चम्पालालजी भरडा, बांसवाड़ा की ओर से जैनपथप्रदर्शक समिति एवं वीतराग-विज्ञान को कुल 2000/- रुपये की सहयोग राशि प्राप्त हुयी; एतदर्थ धन्यवाद !

2. आगरा निवासी चि. विकास सुपुत्र श्री अशोककुमारजी बैनाड़ा का विवाह जयपुर निवासी सुश्री नितिका सुपुत्री श्री वीरेन्द्रकुमारजी सेठी के साथ दिनांक 11 मई को सम्पन्न हुआ। इस उपलक्ष्य में जैनपथप्रदर्शक समिति को 150/- रुपये प्राप्त हुए; एतदर्थ धन्यवाद !

कहानी ...

मुझे मत ढूँढो

ह्न जयन्तिलालजी जैन, नौगामा

''मुझे मत ढूँढो, मैं पर्याय हूँ। मुझे ढूँढने जाओगे तो ढूँढते रह जाओगे; परन्तु मैं मिलनेवाली नहीं हूँ। मेरा स्वभाव ही मात्र एक समय तक टिके रहने का है। अगले समय तो मैं विनाश को प्राप्त हो जाती हूँ।

जो मुझमें सुख खोजेगा उसे सुख तो मिलेगा ही नहीं, उलटे दु:ख की ही प्राप्ति होगी।

पचेन्द्रियों के जितने भी विषय दिखाई देते हैं, उन सबमें मेरा ही साम्राज्य है अर्थात् वे सब पर्यायें ही हैं। जी हाँ ! पुद्गल द्रव्य की स्कंधरूप पर्यायें। तुम्हें उनमें कहीं भी सुख मिलनेवाला नहीं है और तो और जिन पाँच इन्द्रियों और मन के माध्यम से तुम सुख को भोगने का प्रयास करते हो, वे पाँच इन्द्रियाँ और मन भी पुद्गल द्रव्य की स्कंधरूप पर्यायें ही हैं अर्थात् इन सबमें मेरा ही साम्राज्य है। जहाँ देखो वहाँ मैं ही हूँ और मुझमें सुख कहाँ ? क्योंकि मैं स्वयं ही अशरण हूँ, अनित्य हूँ।

जिस ज्ञान में तुम्हें मेरा अस्तित्व ख्याल में आता है, वह ज्ञान और जिस परिणाम के द्वारा तुम मुझमें सुख का अनुभव करने का प्रयास करते हो, वह भाव भी पर्याय ही है अर्थात् उस ज्ञान और भावरूप आत्मद्रव्य की पर्याय में भी मेरा ही साम्राज्य व्याप्त है।

अरे भाई ! मैंने कहा न जहाँ देखो वहाँ मैं ही हूँ। इस जगत में मैं इस कदर व्याप्त हूँकि मैं जिसकी हूँ, वह पर्यायवान द्रव्य तो बेचारा नजर ही नहीं आता, जबकि नजर में आनेयोग्य तो एकमात्र वह ही है; क्योंकि वह अविनाशी है, नित्य है, त्रिकाली है, ध्रुव है। वास्तविक सुख तो उसी के आश्रय से है।

जिस समय भोगने का भाव (पर्याय) है, उस समय भोगने योग्य पदार्थ (पर्याय) नहीं है और जिस समय पदार्थ है उस समय भोगने का भाव नहीं है। अरे भाई ! मैंने साफ-साफ कह दिया न कि मैं पर्याय हूँ और मुझमें कहीं पर भी सुख नहीं है; क्योंकि मैं अनित्य, विनाशी, क्षणस्थायी हूँ।''

''पर्याय ऐसा कहती है'' ह्न पर्याय के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए जिनागम मर्मज्ञ मास्टरजी ने कहा तो क्लास में उपस्थित सभी बालक और अन्य श्रोतागण दत्तचित्त होकर मास्टरजी की बात सुनते रहे। कुछ पल की खामोशी के बाद एक विद्यार्थी बोला ह्न ''लेकिन सर ! एक बात समझ में नहीं आती, आप ने कहा कि पर्याय तो एक समय तक के लिए टिकती है, जबकि यह सामनेवाला स्तंभ तो कई वर्षों से टिका हुआ है तथा वैसा का ही वैसा ही नजर आ रहा है। स्तम्भ ही क्या, यह नया बना हुआ विद्यालय भी हमें वैसा का वैसा ही नजर आ रहा है। वह कैसे ?''

''सूक्ष्म बदलाव प्रति समय चल रहा है; परन्तु हमारे तुच्छ मतिज्ञान और श्रुतज्ञान में यह ख्याल में नहीं आता । प्रतिसमय का बदलाव तो स्पष्ट रूप से केवलज्ञान में ही ज्ञात हो सकता है।'' ह्न मास्टरजी ने कहा।

''सर ! हमने तो सुना है कि केवलज्ञान भी पर्याय है और सिद्धदशा भी पर्याय है। तो क्या वे पर्यायें भी विनाशिक हैं ? केवलज्ञान और सिद्धपर्याय एक बार प्रगट हो जाने पर वह अनंत काल तक बनी रहती हैं ह्न इस बात का क्या तात्पर्य है ?'' ह्न दूसरे विद्यार्थी ने पूछा।

''यद्यपि पर्यायें होने से वे हैं तो विनाशिक ही; परन्तु अनंतानंत काल तक वैसी की वैसी ही पर्यायें प्रति समय उत्पन्न होती रहती हैं।

त्रिकाली ध्रुव ज्ञायक स्वभाव के पूर्ण रूप से अवलम्बनपूर्वक होनेवाली पूर्ण शुद्ध पर्याय अनन्त काल तक वैसी की वैसी ही प्रगट होती रहती है। कोई भी पर्याय हो, वह वैसी की वैसी तो हो सकती है, परन्तु वही की वही नहीं। ह्न आया समझ में।'' मास्टरजी ने समझाते हुए पूछा।

''यस सर !'' सभा में एकसाथ कई स्वर उभरे।

''सर ! ज्ञानी जन जानते हैं कि पर्यायसुख सच्चा सुख नहीं है और द्रव्यस्वभाव/आत्मस्वभाव का बहुत सारा गुणगान भी करते हैं; परन्तु फिर भी वे इन्द्रिय सुखों का भोग करते हैं ह्न ऐसा क्यों ?'' एक विद्यार्थी ने प्रश्न किया।

''निचली भूमिका में स्थित ज्ञानियों के ज्ञान और श्रद्धान तो यथार्थ प्रगट हुआ है फिर भी अनादिकालीन संस्कार के वशीभूत होकर वे इस सुख का कुछ काल तक के लिए भोग करते हैं।

इन्द्रिय सुखों को भोगने के संस्कार जब उदय में आते हैं, तब वह पीड़ा सहन नहीं होती। उस पीड़ा के शमन के लिए भोगों में उनका आंशिक जुड़ान होता है; परन्तु भविष्य में भी मुझे ऐसे ही भोग प्राप्त होते रहें ह्न ऐसी भावना उनके नहीं होती। ऐसी भावनाओं का तो वे अभाव ही चाहते हैं और क्रमश: आत्मस्वभाव के अवलम्बन पूर्वक भोगों की इच्छाओं का अभाव करते हुए मुनिपना भी अंगिकार कर लेते हैं।'' ह्न मास्टरजी ने समझाया।

''खाली बातें करने से कुछ नहीं होता। हमें तो मुनि बनकर दिखाईये, तभी हम आपकी बात माननेवाले हैं।'' ह्न क्लास को सुनते हुए सेठ माणिकचन्दजी जोर-से बोले।

''मुनिपना भी अपने स्वकाल में प्रगट हो जाएगा। प्रत्येक पर्याय अपने-अपने स्वकाल में खचित है। उसे आगे-पीछे नहीं किया जा सकता और उसे स्वकाल में प्रगट होने से रोका भी नहीं जा सकता। मुनिपना हो या गृहस्थपना अथवा श्रावकपना ह्न ये सभी पर्यायें हैं और ये सभी विनाशिक हैं। इनमें सुख खोजना तो मूढ़पने की निशानी है। सुख इनमें नहीं, बल्कि त्रैकालिक ध्रुव ज्ञायक स्वभाव में है।

जो अखंड ज्ञायक स्वभाव का अवलंबन लेते हैं, उन्हें नियम से मुनिदशा प्रगट होती है; परन्तु वह भी कुछ काल तक ही होती है। वह मुनिपर्याय भी सादि-सान्त है। इन सब बातों को धैर्यपूर्वक समझना चाहिए।'' ह्न मास्टरजी ने समझाया।

सेठ माणिकचन्दजी समझना तो चाहते नहीं थे, उन्हें तो मात्र पर्याय विशेष (मुनिपना) का ही आग्रह था, इसलिए रुष्ट होते हुए वहाँ से उठकर चल दिये।

''पर्याय में भूल है, शायद कभी टल जाए।'' ह्न मास्टरजी ने टिप्पणी की और इसी के साथ क्लास को छोड़ दिया। सभी विद्यार्थी और श्रोतागण अपने-अपने घर को रवाना हुए।

इस बात को लगभग पच्चीस वर्ष व्यतीत हो गये थे। सेठ माणिकचन्दजी एक बार फिर उसी जगह पधारें और इधर-उधर देखते हुए कुछ खोजने लगे। थक-हारकर भी उन्हें वह चीज देखने को नहीं मिली, जिसे वे खोज रहे थे। सब कुछ बदला-बदला नजर आ रहा था।

''ब्रह्मचारीजी साहब ! पहले यहाँ एक विद्यालय चलता था न !'' ह्न माणिकचन्दजी ने पूछा।

''हाँ ! चलता तो था, लेकिन वह कई सालों पहले की बात है। लगभग बीस साल पहले की। आपको क्या करना है ?''

''बन्द हो गया क्या ?'' ह्न माणिकचन्दजी ने पूछा।

''नहीं ! दूसरी जगह रेफर हो गया है। किसी को भर्ती करना है क्या ?''

''जी नहीं, दरअसल मुझे उन मास्टरजी से मिलना है, जो उस समय पढाते थे। मैं उनसे मिलकर अपनी एक भूल का अहसास जताना चाहता हूँ।''

''बीस साल पहले के मास्टरजी इस समय आपको कैसे मिलेंगे ? क्या आप यह नहीं जानते कि पर्यायें सप्तरंगी इन्द्रधनुष्य की भाँति क्षणभंगुर हैं, बदलते रहना उनका स्वभाव है।''

''जी ! मैं कुछ समझा नहीं। क्या आप यह कहना चाहते हैं कि मास्टर सूरजभानजी अब इस दुनियाँ में नहीं रहे ?''

''नहीं, नहीं ! ऐसी बात बिलकुल भी नहीं है। मैं तो यह कहना चाहता हूँ कि वे अब मास्टरजी नहीं रहे और न ही यहाँ कहीं रहते हैं। वे तो सब कुछ छोड़-छाड़कर कभी के नग्न दिगम्बर मुनि हो गये हैं। न मालूम इस समय वन में कहाँ विचरण कर रहे होंगे।''

''ओह ! अच्छा !! यह बात है ! चलो यह तो बहुत ही अच्छी बात है। उनको हमारा शत-शत नमन है ।'' ह्न माणिकचन्दजी बोले और वापिस वहाँ से जाने के लिए मुडे ही थे कि ब्रह्मचारीजी ने पूछा ह्न ''यह तो बताईये आप कौनसी भूल का अहसास जताना चाहते थे ?''

''पच्चीस साल पहले जब वे यहाँ क्लास पढ़ाते थे उस समय उन्होंने जो भी बाते अपनी क्लास में बताई थी, वे मुझे पसन्द नहीं आई, मैंने उनका विरोध किया था, लेकिन बाद में जब मैंने एक अन्य मुनिराज के मुख से भी वही बातें सुनी और फिर उन्हीं की प्रेरणा से मैंने स्वाध्याय करना प्रारम्भ किया तो मुझे असलियत का पता चला। बरसों बाद आज जब यहाँ आने का अवसर मिला तो सोचा उन मास्टरजी से मिलता चलूँ और अपनी गलती स्वीकार करूँ। लेकिन यहाँ तो सब कुछ बदला-बदला नजर आया।'' ह्न माणिकचन्दजी ने कहा।

''पर्यायों का तो ऐसा ही स्वभाव है। उस समय यहाँ विद्यालय चलता था और इस समय यहाँ ब्रह्मचारी निवास संचालित हो रहा है। कुछ सालों बाद यह ब्रह्मचारी निवास भी शायद आपको नजर न आए; क्योंकि यहाँ एक विशाल जिनमन्दिर बनाने का विचार चल रहा है।''

''अरे ! आप भी कितने बदल चुके हैं। उस समय आप जवान थे, इस समय आप बुढे नजर आ रहे हैं। उस समय आप तत्त्व के विरोधी थे, आज समर्थक हैं।

हम ही को देखो ना ! उस समय हम उसी विद्यालय में विद्यार्थी थे, युवक थे। आज ब्रह्मचारी हो गये हैं। पर्याय दृष्टि से आज कुछ भी स्थिर नहीं है। आप क्यों व्यर्थ में पर्यायों के पीछे मोहित हो रहे हैं। पर्याय के उस पार विराजमान त्रिकाली ध्रुव, नित्य, स्थिर ऐसे निज ज्ञायक भगवान को देखिये न !'' ह्न ब्रह्मचारीजी ने कहा।

''आप ठीक कहते हैं। पर्यायों की अनित्यता का ज्ञान जरुरी है; परन्तु पर्याय विशेष का आग्रह किसी भी तरह से उचित नहीं; क्योंकि प्रत्येक द्रव्य की पर्याय अपने-अपने स्वकाल में खचित है।'' ह्न माणिकचन्दजी ने कहा और अपनी कार में सवार होकर अपने नगर की ओर रवाना हो गए। धीरे-धीरे उनकी वह कार भी ब्रह्मचारीजी की नजरों से ओझल हो गई। ●

महाराष्ट्र प्रान्त में धर्मप्रभावना

नागपुर (महा.) : अ. भा. जैन युवा फैडरेशन नागपुर द्वारा संचालित महाराष्ट्र प्रान्त तत्त्वप्रचार-प्रसार योजना के अन्तर्गत श्री टोडरमल दि. जैन सि. महाविद्यालय के स्नातक पण्डित सुनीलकुमारजी बेलोकर शास्त्री, सुलतानपुर द्वारा लगभग 2 माह तक महाराष्ट्र के मराठवाड़ा एवं विदर्भ क्षेत्र के परभणी, वसमतनगर, आनंदनगर, सेलू, वालूर, वाशिम, सेनगाँव, रिठद, गोहोगाँव, डोणगाँव, वीरगाँववसु, साकरखेर्डा, विहिगाँव, देवलगाँवसाकर्शा, मोताला, बुलढ़ाणा, हिवरखेड, काटोल, जरूड़, वरूड़ आदि स्थानों पर जाकर प्रत्येक जगह प्रवचन, पूजन-विधान, बाल-प्रौढ़कक्षा, सांस्कृतिक कार्यक्रमों द्वारा महती धर्मप्रभावना की गयी।

अनेक स्थानों पर श्री शांतिविधान, श्री भक्तामरस्तोत्र विधान, श्री पंचपरमेष्ठी विधान आदि का आयोजन किया गया। प्रचार-प्रसार समिति द्वारा निरंतर चल रहे इस धर्मयज्ञ की लोगों ने भूरी-भूरी प्रशंसा की तथा समिति को इस योगदान हेतु धन्यवाद दिया। **ह्न विश्वलोचनकुमार जैनी**

उपकार दिवस सानन्द सम्पन्न

1. मंगलायतन (अलीगढ़-उ.प्र.) : यहाँ दि. 10 मई को आध्यात्मिक सत्पुरुष श्री कानजीस्वामी की 116 वीं जन्मजयंती सानन्द मनायी गई। प्रात: पूजन-विधान के पश्चात् गुरुदेवश्री के सी. डी. प्रवचनों का लाभ मिला।

इस अवसर पर पण्डित कैलाशचन्दजी जैन अलीगढ़, पण्डित राकेशजी शास्त्री, श्री पवनजी जैन, पण्डित संजयजी शास्त्री तथा मंगलायतन में अध्ययनरत छात्रों ने गुरुदेवश्री के जीवनचरित्र पर प्रकाश डाला।

2. गुना (म.प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल के तत्त्वावधान में गुरुदेवश्री की 116 वीं जन्मजयंती उपकार दिवस के रूप में मनाई गई।

इस अवसर पर वीतराग-विज्ञान स्वाध्याय भवन, श्री शांतीनाथ दि. जैन मन्दिर तथा महावीर जिनालय में गोष्ठी का आयोजन किया गया। जहाँ अनेक मुमुक्षु भाई-बहिनों ने गुरुदेवश्री के जीवन-चरित्र पर अपने विचार व्यक्त कर उनके आदर्शों को अपने जीवन में उतारने का संकल्प लिया।

वैराग्य समाचार

1. श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सि. महाविद्यालय के स्नातक पण्डित उमापतिजी शास्त्री, किलसात्तमंगलम् (तमिलनाडू) की धर्मपत्नी श्रीमती विमलमंजरी जैन का 34 वर्ष की अल्पायु में ही अस्वस्थता के कारण दिनांक 3 मई, 2005 को शांतभावपूर्वक देहावसान हो गया है। आप अनेक भाषाओं की जानकार, धार्मिक रूचीसम्पन्न एवं सरल स्वभावी महिला थी।

आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक समिति को 201/- रुपये प्राप्त हुए।

2. फलसिया(उदयपुर-राज.) निवासी श्री उदयलालजी कोठारी का दिनांक 29 अप्रैल, 2005 को देहावसान हो गया है। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक समिति को 100/- रुपये प्राप्त हुए।

3. अकोला निवासी श्रीमती मिश्रीबाई गणेशलालजी बिलाला का गुरुवार दिनांक 5 मई, 2005 को शांत परिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया है। आप धार्मिक विचारवन्त एवं स्वाध्यायप्रिय महिला थी।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही चतुर्गति के दु:ख से मुक्त होकर निर्वाणलक्ष्मी प्राप्त करें ह्न यही कामना है। **ह्न प्रबन्ध सम्पादक**

तत्त्वचर्चा

प्रवचनसार का सार

29

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे ....)

सर्वज्ञ के ज्ञान के अनुसार कालचक्र परिणमनशील है; परंतु वह उल्टा नहीं घूम सकता। सर्वज्ञ के ज्ञान में तो ऐसा नहीं आया है कि कालचक्र रिपीट भी हो सकता है। यह मरकर दूसरा भव धारण कर सकता है; लेकिन इसी भव में ६० वर्ष का व्यक्ति ३० वर्ष का नहीं हो सकता है। पाश्चात्य विद्वानों ने सर्वज्ञ से यह सिद्धान्त समझ लिया होता तो वे ऐसी भूल नहीं करते।

अब मैं जब विदेश जाता हूँ तो वे लोग कहते हैं कि देखो इसमें आपकी क्रमबद्धपर्याय को समझाया है। वे लोग इस फिल्म को गाँव-गाँव में दिखाते भी हैं। कई व्यक्तियों ने इसपर लेख भी लिखें। तब मैंने उनसे कहा कि भाई! यह सर्वज्ञ भगवान की क्रमबद्धपर्याय नहीं है; इसमें उक्त भूल है।

इससे ही संबंधित और एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि जिन लोगों को जातिस्मरण हो जाता है; उनका चित्त विभक्त हो जाता है।

उन्हें भूतकाल की जिस पर्याय का जातिस्मरण हुआ है; वह पर्याय वर्तमान में पुन: कभी आनेवाली नहीं है, वे संयोग पुन: कभी प्रगट होंगे ही नहीं; परन्तु जिसे जातिस्मरण हुआ है; उसका चित्त उन्हीं संयोगों में उलझता है। इसप्रकार उसका चित्त विभक्त हो जाता है। इससे उसे कुछ भी लाभ नहीं होता।

आज यदि हमें जातिस्मरण हो जावे और पूर्वभव में हम कैसे थे, कहाँ थे ? यह पता चल जावे; तब हम आधे वर्तमान जीवन में रहेंगे और आधे पूर्वभव में। यहाँ रहें कि वहाँ रहें कुछ समझ में ही नहीं आएगा।

सबसे बड़ी समस्या तो तब खड़ी होती है; जब वे संयोग कदाचित् अभी भी विद्यमान हों; लेकिन वे उसी रूप में तो होंगे नहीं।

किसी दो वर्ष के बालक को जातिस्मरण हो जाय और वह पचास वर्ष की विधवा महिला की ओर संकेत करके कहे कि यह मेरी पत्नी है; तो क्या होगा ?

कहने का आशय यह है कि क्या वह बालक उस महिला से पत्नी के रूप में और वह महिला उस बालक से पतिरूप में व्यवहार कर सकती है ? हानि के अतिरिक्त इसमें कुछ भी होनेवाला नहीं है।

लोक में वही पर्यायें पुन: नहीं आ सकती है; लेकिन वे हमारे ज्ञान में आ सकती हैं; पर यदि वे ज्ञान में भी आए तो भी क्षयोपशमज्ञानवालों को, रागी जीवों को उनसे कुछ लाभ होनेवाला नहीं है।

रागी जीवों का चित्त इससे विभक्त ही रहनेवाला है।

जो वीतरागी-परमात्मा सर्वज्ञ भगवान हुए हैं, उन्हें अनन्त भूतकाल की पर्यायें ज्ञान में आती है; लेकिन उससे उन्हें कोई समस्या नहीं है; क्योंकि उन पर्यायों के साथ उनका कोई रागात्मक संबंध ही नहीं है।

संबंध दो प्रकार के होते हैं ह्न एक पर को अपना माननेरूप संबंध एवं दूसरा पर से राग करनेरूप संबंध ह्न दोनों प्रकार के संबंध जब पूर्णरूप से टूटे; तभी केवलज्ञान प्रगट होता है।

जब पर को अपना माननेरूप मान्यता टूटती है, राग-द्वेष का परिणाम खत्म होता है; तब पूर्व भव के अनंत माँ-बाप दिखाई दे तो भी कुछ हानि नहीं है। यदि केवलज्ञान के पूर्व पूर्व भव के अनंत माँ-बाप दिखाई दिए तो समस्या उत्पन्न हो सकती है। सम्यग्दर्शन के बाद भी यदि ऐसा हो तो भी गड़बड़ी खड़ी हो सकती है। सम्यग्दर्शन के पूर्व यदि सर्वज्ञता होगी तो अपनत्व का चक्कर खड़ा होगा एवं सम्यग्दर्शन के बाद यदि सर्वज्ञता होगी तो राग-द्वेष की समस्या उत्पन्न होगी।

अत: जैनदर्शन में ऐसी अद्भुत वस्तुव्यवस्था है कि जिसमें यह निहित है कि सर्वज्ञता तभी प्रगट होगी; जब एक समय पूर्व वीतरागी हो जाए। उससे पूर्व सर्वज्ञता प्रगट नहीं हो सकती है।

इस गाथा में प्रदेशों के क्रम के माध्यम से पर्यायों का क्रम समझाया गया है; क्योंकि वर्तमान में विद्यमान होने से प्रदेशक्रम की बात आसानी से समझी जा सकती है; पर पर्यायों की क्रमबद्धता को समझना आसान नहीं है; क्योंकि भूत की पर्यायें नष्ट हो गई हैं और भविष्य की पर्यायें अभी प्रगट नहीं हुई हैं।

ये तीनों काल की पर्यायें केवलज्ञान में विद्यमान है, केवलज्ञानगम्य हैं; इसलिए वे हमारे लिए सूक्ष्म हैं; परन्तु प्रदेशवाली पर्याय अर्थात् असंख्य प्रदेश वर्तमान काल में मौजूद हैं; उन्हें आसानी से जाना जा सकता है; इसलिए वे हमारे लिए स्थूल हैं।

एक रूमाल में एक हजार सूत्र (डोरे) हैं; जो दाएँ से बाएँ गुँथे हुए हैं। क्या एक नंबर के सूत्र (डोरा) को हजार नम्बर के सूत्र तक ला सकते हैं ? यदि उसे वहाँ लाएँगे तो रूमाल फट जाएगा।

इसीप्रकार द्रव्य के एक प्रदेश को उसके स्थान पर से हटाकर दूसरे स्थान पर लेंगे तो उस द्रव्य के ही दो टुकड़े हो जाएँगे। द्रव्य में जो असंख्यात प्रदेश खचित हैं; वे जिस स्थान पर हैं, उन्हें उसी स्थान पर रखना अनिवार्य है ह्न यह सिद्धान्त है।

रूमाल को घड़ी करके रखते हैं तो उसे पुन: फैला भी सकते हैं। ऐसे ही भगवान आत्मा फैलता भी है एवं सिकुड़ता भी है।

जब यह आत्मा संकुचित होता है तो सबसे छोटी अवगाहना में रह जाता है और जब विस्तार को प्राप्त होता है तो लोकालोक में फैल जाता है। लोकाकाश के एक-एक प्रदेश पर इसके एक-एक प्रदेश छा जाते हैं।

जिसप्रकार ज्ञान, दर्शन, चारित्र, सुख, वीर्य ह्न इसप्रकार गुणों के नाम हैं; वैसे प्रदेशों के ऐसे कोई नाम नहीं हैं; फिर भी हम उनमें भेद कर सकते हैं।

हम यह भी कह सकते हैं कि ये पूर्व दिशावाले प्रदेश हैं; ये उत्तरवाले प्रदेश हैं और इनका फैलाव पश्चिम की तरफ है। उनमें एक सुनिश्चित व्यवस्थित क्रम है; परंतु शास्त्रों में उनका कोई विशिष्ट नाम नहीं दिया है; क्योंकि उससे कोई प्रयोजन भी नहीं है।

गुणों के परिणमन में प्रयोजन है ह्न एक जानने का काम करता है, एक देखने का काम करता है, एक श्रद्धा, एक आनंद का काम करता है। इसप्रकार भिन्न-भिन्न गुणों के भिन्न-भिन्न कार्य हैं; इसलिए वहाँ नाम बताना

जरूरी है; लेकिन प्रदेशों के इसप्रकार अलग-अलग नाम नहीं हैं और उनके नाम बताने की जरूरत भी नहीं है।

अब, वह जो आत्मा के असंख्यातलोक प्रमाण प्रदेश हैं; केवली समुद्घात के समय जो लोकालोक के एक-एक प्रदेश पर एक-एक अवस्थित हो जाते हैं; क्या उनके क्रम को बदला जा सकता है ?

जब आत्मा लोकाकाश में फैलेगा तो आत्मा के मध्य के आठ प्रदेश और सुमेरु पर्वत के मध्य के आठ प्रदेश अथवा परमाणु उन दोनों का एक ही स्थान होगा।

लोकाकाश के प्रदेश नहीं बदले जा सकते हैं, वे जहाँ हैं, वहीं रहेंगे। जयपुर के प्रदेश जयपुर में और दिल्ली के प्रदेश दिल्ली में ही रहेंगे। जयपुर को दिल्ली की जगह और दिल्ली को जयपुर की जगह नहीं रख सकते। प्रदेश तो बदले नहीं जा सकते हैं; लेकिन अपनी मन की कल्पना से जयपुर का नाम दिल्ली रख दो और दिल्ली का नाम जयपुर रख दो; पर यह मन की कल्पनामात्र होगी, वास्तविक नहीं।

हमने फैले हुए रूमाल को समेट लिया, समेटते समय भी उनका क्रम नहीं बदला है। जिस सूत्र (डोरा) के पास जो सूत्र था; वह उसी सूत्र के पास है, उसका क्रम नहीं बदला है।

ऐसे ही संकोच अवस्था में आत्मा के प्रदेश नहीं बदलते; वे जिस क्रम में सुव्यवस्थित थे, अभी भी वे उसी क्रम में व्यवस्थित हैं।

जिसप्रकार प्रदेशों का क्रम नहीं बदला जा सकता है; उसीप्रकार पर्यायों का क्रम भी नहीं बदला जा सकता। यह विस्तार-सामान्य है और वह आयत-सामान्य है। यह तिर्यक् सामान्य है और वह उर्द्धता सामान्य है। प्रदेशों के क्रम को विस्तारक्रम कहते हैं और पर्यायों के क्रम को प्रवाहक्रम कहते हैं।

प्रत्येक वस्तु द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावमय है। आचार्य समंतभद्र आप्तमीमांसा में घोषणा करते हैं ह्न

सदेव सर्वं को नेच्छेत् स्वरूपादिचतुष्टयात्।
असदेव विपर्यासान्न चेन्न व्यवतिष्ठते ।।१५।।

प्रत्येक वस्तु का अस्तित्व स्वरूपचतुष्टय अर्थात् स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल एवं स्वभाव से है। आत्मा द्रव्य है, अनंत गुण आत्मा के स्वभाव हैं। अनादि-अनंत पर्यायें द्रव्य का स्वकाल है और असंख्यप्रदेश द्रव्य का स्वक्षेत्र है।

जैसे द्रव्य को नहीं भेदा जा सकता है; वैसे ही द्रव्य के क्षेत्र को भी नहीं भेदा जा सकता है। द्रव्य के क्षेत्र को भेदा नहीं जा सकता है का तात्पर्य यह है कि प्रदेश पलटे नहीं जा सकते हैं। जिसप्रकार उसके एक गुण को भी कम नहीं किया जा सकता है, जिसप्रकार उसका स्वभाव नहीं पलटा जा सकता; उसीप्रकार उसका स्वकाल भी नहीं पलटा जा सकता है। अनादिकाल से लेकर अनंतकाल तक प्रत्येक गुण की एक-एक पर्याय एक-एक क्षण में खचित है।

द्रव्यपर्याय, गुणपर्याय इत्यादि जो भी पर्यायें हैं; वे सब सुनिश्चित हैं ह्न यही क्रमबद्धपर्याय है। आचार्य कहते हैं कि जैसे प्रदेश नहीं पलटे जा सकते हैं, वैसे ही पर्यायें भी नहीं पलटी जा सकती है। इसका नाम है क्रमबद्धपर्याय।

इसप्रकार इस ९९वीं गाथा से क्रमबद्धपर्याय की सिद्धि होती है।

आगे १०२वीं गाथा में आचार्य ने पर्याय के जन्मक्षण और नाशक्षण को स्पष्ट किया है; जिसका उल्लेख गुरुदेवश्री बहुत करते थे।

इसमें हमारी समस्या यह है कि जब हम काल की चर्चा करते हैं तो हमारा ध्यान कालद्रव्य की तरफ आकृष्ट होता है; लेकिन निश्चयकाल हमारे ख्याल में नहीं आता है। हमारा ध्यान मात्र व्यवहारकाल की तरफ ही चला जाता है; लेकिन यहाँ जिस काल की चर्चा चल रही है; वह हमारा काल है; इसलिए इसे स्वकाल कहा है। यह पर्यायों की क्रमबद्धता है।

समयसार परमागम में आचार्य ने यह भावना भाई है कि ह्न **न द्रव्येन खण्डयामि, न क्षेत्रेण खण्डयामि, न कालेन खण्डयामि, न भावेन खण्डयामि।** तात्पर्य यह है कि मैं चारों ओर से अखण्ड हूँ और अखण्ड रहूँ।

सिक्खों में दो दल हैं ह्न अकाली दल एवं निरहंकारी दल।

अकाली दल से उनका तात्पर्य यह है कि भगवान आत्मा काल से खण्डित नहीं होता है ह्न ऐसा माननेवाले अकाली दल में हैं। वे कहते हैं कि धर्म पर काल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

लोग यह कहते हैं कि अब समय बहुत बदल गया है, अब पुराना धर्म काम नहीं आएगा, अब धर्म के नियम बदलने पड़ेंगे। काल का प्रभाव सब पर होता है। काल सभी को खा जाता है; परन्तु अकाली दलवाले ऐसा नहीं मानते। वे कहते हैं कि जिसको काल नहीं खाता है, जो काल से अप्रभावी है; वह धर्म है। अग्नि हजार वर्ष पूर्व भी गर्म होती थी, आज भी गर्म है तथा अनंतकाल बाद भी गर्म ही रहेगी; क्योंकि उस पर काल का प्रभाव नहीं पड़ता है। इसलिए वे कहते हैं कि हम उस धर्म के उपासक हैं; जिसपर काल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

तात्पर्य यह है कि जो परिस्थितियों से बदल जाय, वह धर्म नहीं है। पहले अहिंसा धर्म था तो क्या आज हिंसा धर्म हो जाएगा ? पहले अनेकांत धर्म था तो क्या आज एकान्त धर्म हो जाएगा ?

निरहंकारी वे हैं, जो अहं नहीं करते हैं अर्थात् स्त्री-पुत्र-कुटुम्ब-सम्पत्ति ये सब मेरे हैं ह्न इसप्रकार का अहं (घमण्ड) नहीं करते हैं।

घमण्ड तो अहंकार का बहुत स्थूल अर्थ है। जैनदर्शन में भी ऐसा ही है कि 'मैं देह हूँ' ह्न ऐसी अहंबुद्धि ही अहंकार है, यह अहंबुद्धि ही मिथ्यात्व है। पर में एकत्व करना ही अहं करना है। जिन्होंने पर में से एकत्व तोड़ दिया है, जिन्होंने एकमात्र भगवान आत्मा में एकत्व स्थापित किया है; वे निरहंकारी हैं।

यदि उक्त व्याख्या को सही माने तो हम भी अकाली हैं, निरहंकारी हैं।

वस्तु के स्वरूप पर काल का प्रभाव नहीं पड़ता है अर्थात् 'न कालेन खण्डयामि' इसलिए हम अकाली हैं। इसप्रकार हम दोनों ही दलवाले हैं, हम अकाली भी हैं और निरहंकारी भी हैं।? **(क्रमशः)**

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

सार समाचार

➔ आस्ट्रेलिया के पूर्वी सलामी बल्लेबाज गैग चैपल को भारतीय क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड ने राष्ट्रीय टीम का नया कोच नियुक्त किया।

➔ घटते बाघों की संख्या को ध्यान में रखते हुए दि. 23 मई, 05 को रणथंभौर पधारे प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहनसिंह ने वन्यजीव विशेषज्ञों के साथ चर्चा की तथा वन एवं पर्यावरण मंत्रालय को सर्वे का आदेश दिया।

➔ बांग्लादेश में आयोजित होने वाले 13 वें सार्क शिखर-सम्मेलन में भाग लेने हेतु भारत ने सहमति जताई। ज्ञातव्य है कि इससे पहले यह सम्मेलन दो बार टल चुका है।

➔ लगभग 22 साल बाद 15 मई, 2005 से एअर इंडिया की नई दिल्ली-बर्मिंघम-टोरंटो के बीच हवाई सेवा शुरू।

➔ 16 मई को अपने जोधपुर प्रवास के दौरान राष्ट्रपति डॉ. कलाम ने सैनिक छावनी स्थित बैटल एक्स स्टेडियम में 81 आर्म्ड रेजिमेंट को यशस्वी सेवाओं के लिये स्टैंडर्ड प्रदान किया।

➔ आर्म्ड रेजिमेंट को और अधिक समुन्नत करने के लिये स्वदेशी अर्जुन टैंक जल्द ही सेना में शामिल किया जायेगा।

➔ रेलवे प्लेटफार्म टिकट 1 जून, 2005 से पाँच रुपये का हुआ।

➔ देश में मोम का पहला युद्ध संग्रहालय जयपुर के अमर जवान ज्योति परिसर में बनेगा।

➔ दिनांक 19 मई को हावडा-जोधपुर ट्रेन में डकैती। यात्रियों से मारपीट कर नगदी तथा जेवरात चुराकर चोर भाग गये।

➔ राज. हाईकोर्ट ने सांगानेर के जैन मंदिर को संरक्षित इमारत मानते हुए राज्य सरकार से इस स्मारक की सुरक्षा और संरक्षण करने को कहा है।

➔ रोम में आयोजित ग्रां.पी. निशानेबाजी प्रतियोगिता में महिला ट्रैप स्पर्धा में भारत की शगुन चौधरी ने कांस्य पदक जीता।

➔ लोजपा पार्टी के राष्ट्रीय महासचिव और पूर्व केंद्रीय मंत्री नागमणि ने पार्टी की सदस्यता से इस्तिफा दिया।

➔ केन्द्र सरकार द्वारा भारतीय प्रशासनिक सेवा में कार्यरत अधिकारियों को नैतिक व मानवीय मूल्यों संबंधी प्रशिक्षण दिया जायेगा।

➔ फ्रान्स में आयोजित कान फिल्म समारोह में दो भाईयों जीन पीयरे व लुक डार्डेने द्वारा निर्देशित द चाईल्ड फिल्म को सर्वश्रेष्ठ फिल्म चुना गया।

➔ उत्तरप्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल और तमिलनाडू के टेलिफोन ग्राहकों को लाभ देते हुए इन राज्यों के भीतर होनेवाली टेलिफोन कॉल को स्थानीय कॉल मानकर शुल्क दरों में रियायत दी गई।

➔ दिनांक 25 मई को केन्द्रीय युवा एवं खेलमंत्री तथा फिल्म अभिनेता सुनील दत्त का दिल का दौरा पड़ने से निधन।

➔ भारत की शीर्ष महिला पुलिस अधिकारी किरण बेदी को जेल सुधार हेतु यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयार्क के स्कूल ऑफ लॉ ने डॉक्टरेट की मानद उपाधी प्रदान की।

➔ रूसी विज्ञान अकादमी ने राष्ट्रपति डॉ. कलाम को मानद प्रोफेसर की उपाधी से सम्मानित किया।

शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

1. गुना (म.प्र.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल, गुना के तत्त्वावधान में श्री वीतराग-विज्ञान भवन में दिनांक 3 अप्रैल से 3 मई, 2005 लगभग एक माह तक जयपुर से पधारी बाल ब्र. विदुषी कल्पनाबेन, सागर के सान्निध्य एवं मार्गदर्शन में आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर प्रतिदिन प्रात: एवं रात्रि में गोम्मटसार कर्मकाण्ड एवं चतुर्दश गुणस्थानों पर उनके विशेष व्याख्यान हुए तथा दोपहर में श्री शांतिनाथ दिगम्बर जैन मंदिर में जीवसमास की कक्षा ली गई।

शिविर के अन्तिम दिन तीनों विषयों की परीक्षाएँ लेकर उत्तीर्ण छात्रों को पुरस्कृत किया गया। परीक्षा परिणाम शत-प्रतिशत रहा।

शिविर के दौरान ही दिनांक 22 व 23 अप्रैल को श्री महावीरस्वामी जयंती भी उत्साहपूर्वक मनायी गई; जिसमें **भगवान महावीर का जीवनदर्शन** विषय पर लगभग 36 विद्वानों द्वारा प्रकाश डाला गया। प्रतिदिन रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम भी सम्पन्न हुए। **ह्न मांगीलाल जैन**

2. दाहोद (गुज.) : यहाँ श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल दाहोद के तत्त्वावधान में दिनांक 6 से 15 मई, 2005 तक बाल शिक्षण शिविर अत्यन्त उत्साहपूर्वक सानन्द सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर पण्डित देवेन्द्रकुमारजी जैन बिजौलीयाँ के नियमसार पर सारगर्भित प्रवचन हुए तथा दोपहर में विदुषी राजकुमारीजी जैन, जयपुर द्वारा समयसार के संवर अधिकार पर मार्मिक प्रवचन हुए। प्रात: एवं सायंकाल आप ही के द्वारा चार अभाव एवं कालचक्र विषय पर प्रौढ़कक्षा भी ली गई।

इनके अतिरिक्त पण्डित शाकुलजी शास्त्री मेरठ, पण्डित अनुजजी शास्त्री जयपुर, पण्डित नयनजी शाह हैद्राबाद एवं पण्डित अंकुरजी शास्त्री देहगाँव द्वारा बालकक्षा ली गई। प्रतिदिन जिनेन्द्र भक्ति एवं रात्रि में विविध सांस्कृतिक कार्यक्रम भी कराये गये।

शिविर में लगभग 400 बालकों ने भाग लिया। समस्त कार्यक्रम पण्डित राकेशजी दोशी के निर्देशन में सम्पन्न हुए।

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) जून (प्रथम) 2005

J. P. C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पं. संजीवकुमार गोधा,** डबल एम.ए. जैनविद्या व तुलनात्मक धर्मदर्शन तथा इतिहास एवं **पं. जितेन्द्र वि.राठी,** शास्त्री
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127